P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

निर्गुण पंथ और संत कबीर

हबीब खान
सहायक आचार्य,
हिन्दी विभाग,
राजकीय बाँगड़ महाविद्यालय,
डीडवाना

सारांश

भक्ति की धारा बंजर दिलों पर नहीं बहती। धार्मिक पंथों का जन्म वहीं होता है जहाँ उनके बीज होते हैं। विकसित कर पाने की शक्ति तो परिस्थितयाँ पैदा करती है। निर्गुण पंथ भारतीय चिन्तन का स्वाभाविक विकास है। भारतीय सांस्कृतिक इतिहास में भक्ति स्रोत बहाने का श्रेय रामानन्द को जाता है। दक्षिण से उपजी इस भक्ति की धारा में मानवता की एक चेतना थी जिसका क्रांतिकारी विकास संत कबीर में हुआ। 'मसि कागज छुओ नहीं' की बात करने वाला अनपढ़ संत शताब्दियों बाद महाकवियों की जमात में सबसे आगे हैं। अपने काल का समाजशास्त्र, युगबोध और जीवन चेतना के विचार दर्पण की भाँति स्पष्ट है जिसमें सिकन्दर लोदी का भारत आँखों के सामने तैरने लगता है। कबीर का साहित्य आत्मसम्मान और नारायण में नर की प्रतिष्ठा स्थापित करने वाला कालजयी साहित्य है। अपने युग को फलाँगने का हौंसला बिरले लोगों में ही पाया जाता है जिनके चिन्तन में केवल मानवता होती है, और धार्मिक मतवाद के विनाश की योजना होती है और आडम्बरों का परदाफाश का साहस होता है।

ईश्वर को जीवन में 'कस्तुरी कुण्डली बसै मृग ढूढ़े वन माहीं' की भाँति हर घट में राम का वास बताकर धर्म की राजनीति करने वालों की बोलती बंद कर दी थी। धार्मिक विश्वासों और मान्यताओं से निरपेक्ष रहते हुए कबीर ने विद्वानों को सर्वाधिक आकर्षित किया है। पाश्चात्य विद्वानों ने सम्मान के साथ कबीर को 'भारतीय लूथर' घोषित किया है। कबीर का सारा जीवन राम का जप करते शिवनगरी में बीता, उनकी मगहर जाकर प्राण त्यागने की बात बेमानी नहीं है। मन, वचन और कर्म से मुक्तिदाता के पदचिह्नों पर चलते जिसका जीवन गुजरा हो उसके लिए क्या मगहर और क्या काशी? सब जगह ईश्वर का वास है। कबीर ने अपनी महिमामयी वाणी से समाज का कलुष धोने का स्तुत्य कार्य किया है। समाज को देखा, यथार्थ को भोगा, विषम परिस्थितियों के जाल में आकण्ठ फँसे मानव जीवन में मानव प्रेम को, मानव के लिए व्यापक रूप से स्थापित करते हुए मानव प्रेम को ही ईश्वर प्रेम का पर्याय बना दिया। आडम्बरहीन सादा जीवन गृहस्थ बनकर बिताया।

मुख्य शब्द : फलाँगने, उजागर, सहज समाधि, लोककल्याण, मानवता, परमतत्त्व, वैचारिक, अग्रदूत, तौहीद, बेमानी शीशा पीलाई दीवार।

प्रस्तावना

मध्यकालीन भारत में उपासना और भक्ति जीवन का अंग थी, जिससे लोक मानस प्रभावित था। जब सगुण भक्ति विवादों और संकीर्णताओं में घिर गई, तब निर्गुण पंथ व्याप्त होता चला गया। प्रतिमा की आराधना और पूजा, दर्शन–लोभी जनता को देव दर्शन अस्पृश्य वर्ग को अलभ्य हो गया तो भगवान की मूर्ति मंदिर के स्थान पर लोगों के हृदय में स्थित होने लगी, तो निर्गुण धारा परिस्थितियों का प्रसाद के रूप में जनता का सहारा बनी।

संत कबीर ने मानवता से परिपूर्ण एक ऐसे उदात्त पंथ का सूत्रपात किया जिसमें जातीयता, साम्प्रदायिकता, पाखण्ड, आडम्बर और रूढ़िवादिता के लिए कोई स्थान नहीं था। धर्म के नाम पर शोषण और ठगाई का परदाफाश किया। कबीर ने अपनी वाणी द्वारा सामाजिक बुराइयों का खुलकर विरोध किया। समानता और समतामूलक मूल्यों पर आधारित उनकी वाणी लोककल्याण की भावना से ओतप्रोत थी। सामाजिक अन्याय के प्रति विद्रोही भावना बड़ी प्रखर थी। हिन्दुओं में प्रचलित वर्णव्यवस्था, अस्पृश्यता, जात–पाँत, कर्मकाण्ड और साम्प्रदायिक विद्वेष की समाप्ति के लिए आध्यात्मिक तर्कों का आधार ग्रहण किया। साम्प्रदायिक भावना का निषेध करते हुए शक्ति की दृढ़ता के लिए सत्संगति को आवश्यक बताया। ऐसे समय में कबीर ने मत–मतान्तरों का विरोध करते हुए निर्गुण और सर्वव्यापी ब्रह्म की उपासना पर बल दिया क्योंकि विभिन्न मतों में भ्रमित हो कर व्यक्ति जीवन के वास्तविक स्वरूप को विस्मृत कर देता

है। निर्गुण की अलख जगाने वाला कबीर हिन्दुओं के लिए वैष्णव भक्त, मुसलमानों के लिए पीर, सिक्खों के लिए भक्त, कबीरपंथियों के लिए अवतार, आधुनिक राष्ट्रवादियों के लिए एकता का हिमायती, हाशिए के लोगों के लिए प्रगतिशील विचारक और आधुनिक विचारकों के लिए मानव धर्म का प्रवर्तक माना जा सकता है।

साहित्यावलोकन

जब कोई अनुसंधान किया जाता है तो भविष्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। पूर्व में किया शोधकार्य वर्तमान का आधार बनता है तथा वर्तमान परिस्थितियों की कसौटी पर किया अनुसंधान भविष्य के लिए शोध की राह हमवार करता है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर को विशेष विचारधारा से ग्रसित होकर लिखने वाले खाँचो को तोड़ दिया है और कबीर को मध्यकाल के महत्वपूर्ण स्थान पर स्थापित किया है। इसलिए उनका कबीर पर लिखा साहित्य अद्वितीय और मील का पत्थर है। डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, डॉ. सरनाम सिंह शर्मा, डॉ. श्यामसुन्दर दास, डॉ. वासुदेव सिंह और पुरूषोतम अग्रवाल का शोधकार्य अपने–अपने क्षेत्र में जमीन तोड़ने वाला बेजोड़ साहित्य है।

प्रस्तुत आलेख में निर्गुण पंथ के उदय की पृष्ठभूमि पर विवेचन करते हुए कबीर के राम को तौहीद की छलनी में से निकाला गया है। लेकिन उनकी विचारधारा को तोड़ा मरोड़ा जा रहा है। जिस प्रकार हजरत मुहम्मद के इस्लाम को जिहादी आतंकवादियों ने बदनाम कर दिया है, वैसे ही ढोंगी कबीरपंथियों ने कबीर के सिद्धांतों के विपरीत जाकर स्वरूप को विकृत कर दिया है। कबीर की वर्तमान प्रासंगिकता इसी से आँकी जा सकती है कि सिक्खों के गुरूद्वारों और अन्य जातियों के सत्संगों में कबीरवाणी की गूँज कबीर के महत्त्व को उजागर करती है। वर्तमान में दलित विमर्श के साथ कबीर को जोड़कर देखा जा रहा है। दलित विमर्श के विद्वान कबीर के विचारों को माँजकर अपने अनुकूल बना रहे हैं।

शोध प्रविधि

इस शोध पत्र में विषय को समझने के लिए अध्ययन कर, सामग्री संकलित कर विवेचनात्मक या आलोचनात्मक प्रविधि को अपनाया गया है, जिससे निर्गुण पंथ के समस्त पक्ष उजागर हो जाये।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध पत्र में निर्गुण पंथ और संत कबीर को विविध आयामों से समझने का प्रयास किया गया है। निम्नलिखित शीर्षकों में बाँटकर विषय के मर्म तक पहुँचने का विनम्र प्रयास है।

1. निर्गुण का अर्थ
2. निर्गुण पंथ का उदय
3. निर्गुण पंथ के मूल सिद्वान्त
4. निर्गुणधारा की दार्शनिक पृष्ठभूमि
5. संत कबीर का योगदान
6. निर्गुणधारा का पतन
7. निर्गुण संत और कबीर : प्रासंगिकता
8. निष्कर्ष

निर्गुण का अर्थ

निर्गुण का अर्थ गुणों से हीन अथवा बेकाम होना नहीं है, गुणों से परे होना है। अर्थात् निर्गुण को सत, रज और तम गुणों में बाँधा नहीं जा सकता है। निर्गुण सर्वव्यापी है। उसे मंदिर में कैद नहीं किया जा सकता है। जन्म लेना और मरना उसका काम नहीं है। किसी अत्याचारी का नाश करने हेतु उसे अवतार लेने की जरूरत नहीं है। निर्गुण ज्ञान का आधार हो सकता है, भाव का आधार नहीं हो सकता। समतत्त्व इन्द्रिय गोचर नहीं है। उसका कोई रूप नहीं है, उसका वर्णन करना कठिन है। सहज समाधि द्वारा अनहद नाद को सुना जा सकता है। रहस्यवादी विचारधारा में परमात्मा को पति और आत्मा को दुलहन माना गया है। निर्गुण राम परमतत्त्व है। माया को आत्मा से निकालकर ही सत्य का ज्ञान हो सकता है। सत्य का ज्ञान सतगुरू के माध्यम से ही संभव है। परमतत्त्व का अस्तित्व घट घट में, जड़ चेतन में, लोक परलोक सब जगह है।

निर्गुणपंथ भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन का प्रतिफलन है। उपनिषद उसके मूल स्रोत है। यह परम्परा बौद्व सिद्धों, जैन कवियों और नाथ योगियों द्वारा परम्परा आगे बढ़ी है। डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल के शब्दों में, 'भारतीय जीवन में संचार करने वाली आध्यात्मिक प्रवृत्ति की इस धारा के उद्गम अत्यन्त प्राचीनता के कुहरे में छिपे हुए हैं। युग–युगान्तर को पार करती यह धारा अबाध रूप से बहती चली आ रही है।'[1] (हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय, पृ. 01)

निर्गुण पंथ का उदय

इस जीवन के परवर्ती अनन्त अमर जीवन के लिए आकुलता भारतीय धर्म साधना का सार है। परलोक की साधना में ही इहलोक की सार्थकता मानती है। भारतीय जीवन में संचार करने वाली आध्यात्मिक प्रवृत्ति इस पंथ के उद्गम का कारण रही है। मुसलमानों का राज स्थापित हो जाने पर भारतीय राजनीतिक अवस्था ने, दो संस्कृतियों के वैचारिक संघर्ष ने इस पंथ के उदय होने पर अपनी भूमिका निभायी। दीन के बारे में कोई दबाव नहीं है।''(पवित्र कुरआन, सूरह बकरः 256) किसी भी व्यक्ति को शक्ति के बल पर ईमान लाने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता, फिर भी विदेशी आक्रमणकारियों और मुसलमान बादशाहों ने इस नियम की परवाह न करते हुए इस्लाम का प्रसार किया। दूसरी ओर भारतीय समाज में व्याप्त वर्णव्यवस्था जिसको समाज की व्यवस्था शांति और मर्यादा के लिए कर्म–आधार पर स्थापित किया था वह वैषम्य और क्रूरता की विधायक बन गई। शूद्र जो निम्नतम वर्ग में थे, सभ्य समाज के अधिकारों से वंचित कर दिए गए। विशिष्टाद्वैत को नाथमुनि ने तैयार किया था और रामानन्द ने इसे दृढ़ रूप से आरोपित कर दिया। उनकी शिष्य परम्परा में संत कबीर ने 'हरि को भजे सो हरि का होई'' कहकर सबके लिए भक्ति का मार्ग खोल दिया। हिन्दू संतों और सूफी फकीरों के आपसी तालमेल ने भी हिन्दुओं को एकेश्वरवाद की ओर आकृष्ट किया। हिन्दुओं में भी शूद्रों का भगवान की शरण में जाने के द्विगुण कारण विद्यमान थे। हिन्दू होने के कारण मुसलमान राजा उन पर अत्याचार करते

थे, और शूद्र होने के कारण उसी का सधर्मी उच्च जाति का हिन्दू भी। रामानन्द की शिष्य परम्परा में समस्त जाति के लोग शामिल हो गए। रामानन्द बहुत ही प्रभावशाली संत थे। जिन्होनें अपने प्रभाव से कुछ जबरदस्ती बनाये गए मुसलमानों को वापिस हिन्दू बना दिया। भविष्य पुराण के अनुसार, 'स्वामी रामानन्द ने इस अवसर पर ऐसा चमत्कार दिखाया जिससे इन लोगों के गले में तुलसी की माला, जिह्वा पर रामनाम और माथे पर श्वेत और रक्त तिलक अपने आप प्रकट हो गए'[2]

हिन्दू – मुस्लिम सम्मिलन की भूमिका वेदान्त दर्शन और सूफी दर्शन ने प्रस्तुत की। स्वामी रामानन्द और शेख तकी की विचारधारा का ही प्रभाव था कि कबीर ने मुख से घोषित किया था कि परमात्मा एक और अमूर्त है। वह बाहरी कर्मकाण्ड से अप्राप्य है। उसकी केवल प्रेमानुभूति हो सकती है। सर्वत्र उसी की सत्ता व्याप्त है। इसलिए उसे बाहर न ढूँढ़कर अन्तर्मन में खोजना चाहिए। कबीर ने स्पष्ट कहा था, 'मैने राम नाम का बीज शब्द तो गुरू से ग्रहण किया परन्तु उसकी व्याख्या और विस्तार अपने अनुभव से किया है।'[3]

निर्गुण पंथ के मूल सिद्वान्त

निर्गुण पंथी मुख्य रूप से इन सिद्वान्तों पर अमल करते है और अपना मूल मंत्र मानते है। (1) माया का त्याग (2) एकेश्वरवाद की स्थापना (3) जाति–पाँति का विरोध (4) लोभ और अहम् का त्याग (5) सत्संग (6) आडम्बरों का त्याग (7) नाम–स्मरण।

भगवान बुद्ध के उपरान्त उत्तर भारत में धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में नवीन चेतना का स्वर फूँकने वाले शंकराचार्य के बाद कबीर सर्वश्रेष्ठ और सर्वप्रथम है। उन्होंने संत काव्य की धारा को चलाया, और पूर्णता तक पहुँचाया। एक ऐसी विचारधारा की स्थापना की जो कई शताब्दियों उपरान्त महात्मा गाँधी को प्रभावित किया। राजनाथ शर्मा ने सही ही लिखा है, 'हिन्दी साहित्य और हिन्दू समाज में कबीर नवीन जागरण के अग्रदूत माने जाते हैं। आज कबीर जनता के हृदय में व्यक्ति के रूप में नहीं, प्रतीक रूप में प्रतिष्ठित है।'[4]

निर्गुण धारा की दार्शनिक पृष्ठभूमि

ब्रह्मा

कबीर ने निर्गुण राम को भजने का उपदेश दिया है। उन्होंने बड़ी साफ शब्दावली में कहा है कि तीनों लोकों में जिस दशरथसुत राम का बखान किया जाता है, राम नाम का मर्म उससे भिन्न है। उनका मानना था कि ईश्वर पैदा नहीं होता है और अवतार भी नहीं लेता है। वह अगम है और संसार के कण–कण में विद्यमान है।

जीव

कबीर का मानना था कि जीव ईश्वर का अंश है और ईश्वर का अंश परम शुद्ध है। सभी जीव ईश्वर की सन्तान है इसलिए उसमें भेद करना ठीक नहीं है। जीव माया से ग्रसित होकर राम से दूर हो जाता है और आत्मा कलुषित कर लेता है।

माया

कबीर मानते है कि माया ही आत्मा को सत्यभान से रोकती है। यह महाठगिनी है केशव के घर कमला, शिव के घर भवानी, जोगी के घर जोगिन, राजा के घर रानी, भक्तों के घर भक्तिन और तुर्को के घर तुरकानी बनकर रहने वाली साक्षात् माया का रूप है। ज्यों–ज्यों जीव माया से ग्रसित होते जाता है त्यों–त्यों परमात्मा से दूर होता चला जाता है।

जगत्

यह संसार निस्सार है सेमल फूल की भाँति है जो देखने में सुन्दर है परन्तु उसमें सुगन्ध नहीं है। क्षणिक है और नष्ट होने वाला है। यह 'जग आंधरा जैसी अंधी गाई, ब्रह्म था सो मर गया, ऊभी चाम घटाई।' संसार को समझाने का तरीका कबीर से बेहतरीन नहीं हो सकता।

मोक्ष

कबीर का मानना है कि आत्मा और परमात्मा का मिलन ही मोक्ष है। आत्मा की परम शुद्वि ही मोक्ष है। जब आत्मा रूपी दुलहन का अविनाशी से फेरा हो जाता है तो वह अमरत्व प्राप्त कर जाती है।

संत कबीर का योगदान

निचली जाति से आये सन्तों ने जो धार्मिक आन्दोलन छेड़ा था उसके कुछ निश्चित सामाजिक अर्थ थे। ब्राह्मण सुगति का अधिकारी है तो उससे कम अधिकार शूद्र का नहीं है। वर्णव्यवस्था हिन्दू समाज का आधार है और उस पर चोट करना उसकी बुनियाद पर चोट करना था। निर्गुण पंथ का आधार सामाजिक विद्रोह से उपजी चेतना का ही प्रतिरूप है। सामन्ती व्यवस्था में जब पूँजी का प्रसार होता है तो व्यापार को बढ़ावा मिलता है। व्यापार के बढ़ने से लोग अपना खानदानी पेशा छोड़कर नया पेशा अपनाने लगता है जिससे वर्णव्यवस्था में शिथिलता आती है। गुजरात में बादशाह की खिलाफत करने वाला तगी (जाति का चमार) अकबर का मुकाबला करने वाला हेमू(बनिया) और अकबर का चित्रकार जसवंतसिंह कहार था। कबीर ने वर्णव्यवस्था के विनाश में कील ठोकने का काम किया था।

मध्यकाल में कबीर का सामन्ती शक्ति के सामने खड़े होना अंधे के हाथ लगा बटेर नहीं था। वे अपने संघर्ष की परिस्थितियों के बारे में सजग थे। चरम तन्मयता में मंत्रबद्व मृग जिस प्रकार वध की संभावना से तनिक भी विचलित नहीं होता वैसे ही जाति, धर्म और मुफलिसी की दोजख से आकंठ घिरे कबीर मनुष्य के लिए समग्र मुक्ति के स्वप्न को शब्द देते हैं। वे मानते हैं कि प्रेम खाला का घर नहीं है यहाँ तो वे ही जा सकते है, 'सीस उतारे भुई धरै सो घर पैठे मांहि'' शायद इतने दृढ विश्वास के बल पर ही सिकन्दर लोदी जैसे धर्मान्ध से टक्कर ले सके थे। 'अन्तर्साक्ष्य से यहाँ तक प्रमाण मिलता है कि सन्त स्वभाव कबीर को लोदी ने हाथी से कुचलवाया और जंजीरों में बाँधकर गंगा में फेंकवा दिया था।'[5] (डॉ. रामकुमार वर्मा, संत कबीर, पृ. 39)

कबीर ने किसी का अनुगमन नहीं किया जो सत्य और वास्तविक लगा उसे ही अपनाया। वे पूर्ण मानवता की स्थापना के लिए संकल्पित थे। कपट, पाखण्ड, वाक्जाल और अत्याचार के घोर विरोधी थे। उनकी क्रांति बाहरी विप्लव न होकर अन्तर्मुखी थी। कबीर के आन्तरिक द्वन्द्व को रवीन्द्र नाथ टेगोर की इन पंक्तियों से समझा जा सकता है, '' मानव आत्मा जब विश्वात्मा से अपना तादात्म्य कर लेती है तब मनुष्य सच्चे अर्थों में

मानवधर्मी हो जाता है. . . किन्तु धर्म अनिवार्यतः मानवता को केन्द्र में रखकर चलता है। वह मनुष्य को उदात्त बनाता है।''[6] (रवीन्द्रनाथ टैगोर, द रिलीजन ऑफ मेन, पृ. 114),

आचार्य शुक्ल ने अव्यक्त अगोचर को ज्ञान का विषय मानकर अनावश्यक रूप से इसे उपासना और काव्य क्षेत्र में घसीटने की बात कही है परन्तु वेद, उपनिषद और गीता में भी सगुण भक्ति के साथ निराकार परमात्मा की भक्ति का भी निरूपण किया गया है। कबीर ने वचनों के आधार पर नहीं माना जा सकता है कि कबीर मुसलमानों के एकेश्वरवाद में विश्वास करते हैं। एकेश्वरवाद के अनुसार ईश्वर एक है, उसी के सृष्टि बनाई, उसके समान दूसरा नहीं है। सृष्टि उससे अलग है। फरिश्ते, इन्सान और जिन्न उसकी पैदा की गई कृतियाँ है।

पवित्र कुरआन का स्पष्ट मानना है, 'कह दीजिए कि वह अल्लाह एक है। अल्लाह बेनियाज है। न उससे कोई पैदा हुआ है और न वह किसी से पैदा हुआ है। न उसका कोई समकक्ष(हमसर) है।'[6]

मुसलमानी एकेश्वरवाद में सबसे बडा अपराध है कि अल्लाह को अपने से अभिन्न मानना। इस अपराध के कारण मंसूर को प्राण दण्ड मिला और सरमद का सिर काट दिया गया था। तौहीद के खुदा की तुलना संसार में किसी से भी नहीं की जा सकती है। उसकी बेनियाजी का करिश्मा ऐसा होता है कि वह 'कुन'(हो जा) से सृष्टि का निर्माण करता है। वह बिना माता–पिता के आदम को पैदा कर सकता है। वह हजरत दाऊद की आवाज में वह मिठास भर देता है कि पहाड़ भी उनके साथ खुदा का नाम लेते है। वह हजरत सुलेमान को इंसान, जिन्न, हवा और पक्षियों की सल्तनत दे देता है। हजरत अयूब को भंयकर बीमारी के बाद जवानी दे देता है। हजरत मूसा से हिजाब में कलाम करता है। हजरत मूसा की अस्सा (लाठी) को साँप भी बना सकता है और समुद्र को फाड़ भी सकता है। वह हजरत यूसुफ को कुएँ से निकलवाकर मिश्र का बादशाह बना देता है। हजरत ईसा को बिना पिता के पैदा कर माँ की गोद से बोलने की ताकत दे देता है। वह अनपढ़ पैगम्बर पर बेहतरीन अरबी में कुरान नाजिल कर सकता है और अपनी कुदरत की निशानियाँ दिखाने के लिए मेअराज पर भी बुला सकता है। बेशक! वह हर चीज पर कुदरत रखने वाला है। इसलिए कबीर का दर्शन इस्लामिक तौहीद से भिन्न है।

अद्वैत की मान्यता है कि सृष्टा ही सृष्टि बन जाता है। अज्ञान के कारण ही नाना तत्त्व की कल्पना होती है। सच्चा ज्ञान तो अद्वैत के और अभेद के अनुभव पर ही आधारित है। कबीर ने घोषणा की थी 'हम सब माँहि, सकल हम माहीं, हम पै और दूसरा नाहीं। इसलिए कबीर का दर्शन शंकर के अद्वैत के नजदीक है। माया को दूर कर सत्य का दर्शन परमात्मा का ही दर्शन है। कबीर की कथनी और करनी में अद्‌भुत साम्य था। उन्होनें साधना के लिए गृहत्याग का उपदेश कभी नहीं दिया। उनकी आँखिन देखी प्रेम के तन्मयी भाव गहन भक्ति और अनुभूति का प्रदर्श तक ठीक बैठती है। उनके हृदय से निःसृत भाव सीधे दिल पर चोट करते है। उनमें अनुभूति की सघनता है। यह सघनता उनके साहित्य में सच्चाई और आत्मबल के सहारे शक्ति बनकर उभरी है। यही वही शक्ति है जो सामन्ती शक्तियों में सामने शीशा पीलाई दीवार की भाँति निडर खड़ी हो जाती है।

हिन्दू–मुस्लिम एकता की विचारधारा आज जो इतनी प्रबल हो उठी है युगदृष्टा की भाँति उन्होनें शाश्वत सामाजिक विषमताओं का खण्डन करके शुद्ध मानवतावाद का प्रचार किया। परमात्मा के प्रति सच्ची आस्था और प्राणीमात्र के साथ शुद्व व्यवहार कबीर का धर्म था। वे उसी मानव धर्म को श्रेष्ठ मानते थे जिसमें सभी धर्मों की श्रेष्ठ बातों का सम्मिश्रण था। वे मन वचन और कर्म के सामंजस्य के समर्थक थे। परमात्मा की सर्वव्यापकता को स्वीकार कर पददलित लोगों को भी अपना बन्धु बनाया। शास्त्रीय आतंक जाल का भंडाफोड़ कर लोकाचार के निविड़ जंजाल को छिन्न–भिन्न कर निरावरण सत्य तक सहज ही पहुँचने की उनमें प्रतिभा थी। युगावतार की शक्ति लेकर यात्रा शुरू की थी शायद इसलिए ही भक्तिकाल में अपना स्थान बना सके।

कबीर के राम न तो पुराणों के दशरथ सुत और न ही वेदान्तियों के निर्गुण ब्रह्म और नहीं डॉ. द्विवेदी के निर्गुण राम बल्कि लौकिक पीव और प्रेम का आलय है। कबीर ने उस लौकिक पीव की संभावना घट–घट में देखी है। उसके लिए पौराणिक और वेदान्तिक होना जरूरी नहीं है। यह सत्य है कि रामानन्द ने उपासना के क्षेत्र में जाति–बन्धन को शिथिल कर दिया था और अपने शिष्यों में समाज के निम्न श्रेणी के भक्तों को भी स्थान दिया था। वे इस सिद्वान्त को जनता में अधिक प्रसारित नहीं कर सके। काशी में धार्मिक और सांस्कृतिक मण्डल में स्वयं रामानन्द अधिक स्वतंत्र नहीं रह सके। संकुचित स्वतंत्रता के साथ मुक्त कंठ से प्रशंसा की जावे तो बात समझी जा सकती है। सूर्योदय के पहले गंगाघाट पर स्नानकर लौटने वाला इस भय से कि किसी भी कलुष दृष्टि उन पर न पड़ जावे, वह समभाव के सिद्वान्त को कितना अमली जामां पहना सकता है और ब्राह्मण शूद्र को कितना ज्ञान दे सकता था इस को सहज ही काल संदर्भ में समझा जा सकता है।

गोरखनाथ, वाममार्गियों और साखी सबद उचारते कबीर पर कटाक्ष करते तुलसीदास को जब संतोष नहीं हुआ तो राम के मुख से कहलाया कि जीव धारियों में मुझे सबसे प्रिय विप्र है। तन्मयता से भगवत लीला गायन में लीन सूरदास को भ्रमरगीत से उद्‌भावना करवाकर निर्गुण ब्रह्म की जो मखौल उड़वायी गई है वह सगुण की विजय उत्सव और निर्गुण भक्ति का नकार नहीं तो और क्या है? लेकिन कबीर निर्गुण से भी आगे उस राम से नाता जोड़ते है जो हर व्यक्ति के अंतःकरण में रहता है जिसे वे कस्तुरी मृग और पहुप में बास जैसे रूपकों से व्यक्त कर अनुभूति के जीवन–बोध से जोड़ देते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है, 'अपने लक्ष्य की सच्चाई पर उनकी अप्रतिहत आस्था थी, तभी चली आ रही सारी लीकों को रौंदते हुए वे अपनी लीक अलग बनाकर चले, सायर, सिंह और सपूत का उदाहरण सामने रखा। यदि अपने स्वानुभवों पर, अपने रास्ते की सच्चाई पर उनका इतना अखण्ड विश्वास नहीं

होता तो अनपढ़ होते हुए भी पंडितों के गढ़ काशी में उनके पोथी ज्ञान को कठोर चुनौती देते हुए उन्हें इस प्रकार नहीं ललकारते 'मैं काशी का एक जुलाहा, बूझहु मोर उन्हे चुनौती देते हुए ऐसा नही गियाना या पंडितवाद वदन्ते झूठा'[7]

निर्गुणधारा का पतन

जिस वैदिक पौराणिक परम्परा और उससे पोषित सामाजिक व्यवस्था के विरोध में निर्गुण धारा आगे बढ़ी थी, कालान्तर में निर्गुण धारा भी उसी सर्वग्रासी परम्परा की धारा में विलीन हो गई। पिछले 500 सालों से कबीर के विचारों को वैदिक–पौराणिक परम्परा के विभिन्न खाँचों में ढालने का प्रयास लगातार कबीरपंथियों में चल रहा है जबकि उनकी विचारधारा का किसी से टकराव नहीं है। भक्ति आंदोलन जिस सामन्ती व्यवस्था के विरूद्व खड़ा हुआ था लेकिन कालान्तर में उसी व्यवस्था ने पुनः अपने अनुकूल बना लिया। इससे साबित होता है कि सदाचारवाद चाहे कितना ही क्रांतिकारी क्यों न हो सामाजिक व्यवस्था को बदलना कठिन है। डॉ. डी.पी. मुखर्जी ने भक्ति आन्दोलन की सामाजिक असफलताओं की और संकेत किया है, 'भक्ति आन्दोलन में समाज के स्वरूप की पहचान है लेकिन सामाजिक हित की कोई धारणा नहीं है। फलतः उसमें आत्मा के अनुरोध और सामाजिक जिन्दगी की ठोस जरूरतों के बीच दरार है। आध्यात्मिकता की भौतिक अन्तर्वस्तु और लोकधर्म के विभिन्न रूपों के बीच अन्तर्विरोध है। भक्ति आन्दोलन की यही आन्तरिक कमजोरी उसकी सामाजिक विफलता का मुख्य कारण है। केवल साहित्य के सहारे समाज बदलने की आकांक्षा का अंत प्रायः असफलता में ही होता है।'[8]

कबीर ने जीवन भर जिन धार्मिक सामाजिक रूढ़ियों का विरोध किया, उन्हीं में कबीर को कैद करने की कोशिश कबीर पंथियों ने की है। कबीर ने अपने जीवन में कभी मठ नहीं बनाया सम्प्रदाय नहीं बनाया। घट–घट में राम का जप करने वाले कबीर का मठ भी बन गया है। कबीर पंथ नाम से सम्प्रदाय भी बन गया है। कबीर के बाह्य आडम्बरों का विरोध किया, कबीर पंथियों ने माला, छाया तिलक के सहारे लोक और परलोक दोनों साधने के साधन है। कबीर के चरित्र में चमत्कार आरोपित कर अवतार बना दिया है। कबीर का मंदिर भी स्थापित कर दिया है और विधिवत मूर्ति पूजा का भी विधान कर दिया गया है।

मुक्तिबोध ने सही स्थापना है कि भक्ति आन्दोलनों में उच्च वर्गो का प्रभाव शनैःशनैः मजबूत होता गया भक्ति आन्दोलनों के बिखरने और ताप खो देने का महत्वपूर्ण कारण रहा है। वे लिखते है, 'शिवाजी स्वयं मराठा क्षत्रिय था किन्तु भक्ति आंदोलन से जाग्रत जनता के कष्टों से खूब परिचित था और स्वयं एक कुशल संगठक और वीर सेनाध्यक्ष था। संत रामदास पेशवा ब्राह्मण हुए किन्तु युद्धसत्ता नवीन सामन्तवादियों के हाथों में रही। उधर सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र में निम्नवर्गीय भक्तिमार्ग के जनवादी संदेश के दाँत उखाड़ लिए गए। उन संतों को सर्ववर्गीय मान्यता प्राप्त हुई किन्तु उनके संदेश के मूल स्वरूप पर कुठाराघात किया गया और जातिवादी पुराण धर्म पुनः निःशंक भाव से प्रतिष्ठित हुआ।[9] (नई कविता का आत्मसंघर्ष, पृ. 88)

निर्गुण संत और कबीर की प्रासंगिकता

समतामूलक नव आन्दोलन के प्रवर्तक रामानन्द तो ब्राह्मण थे लेकिन इसको बढ़ावा देने वाले अधिकांश संत पिछड़े वर्ग से ही आये थे। महाराष्ट्र के संतों में गोरा और रांका कुम्हार, सांवता माली, नरहरि सुनार, जोगा–तेली, शामा– चूड़ी वाला, बंका–महार, कान्हो पात्रा वेश्या थी। कश्मीर का संत लल्ता मेहतर था। कबीर जुलाहा, सेन–नाई, धन्ना जाट, रैदास चमार जाति से थे।

रविदास की वाणी से प्रभावित होकर मीरांबाई और झाली रानी शिष्या बन गई। राघवानन्द ने अपनी योग शक्ति से रामानन्द की आसन्न मृत्यु से रक्षा की थी। कबीर के विचारों से प्रभावित होकर हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे साहित्य मर्मज्ञ और आचार्य रजनीश जैसे तार्किक बुद्विजीवी भाष्यकार बन गए है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टेगौर पर भी इनका प्रभाव देखा जा सकता है। कबीर का व्यक्तित्व सूर्यकान्त त्रिपाठी'निराला' मुक्तिबोध और नागार्जुन को प्रेरित करता रहा है। ग्रियर्सन ने कहा था कि कबीर के सिद्वान्त सेण्ट जोन की कविताओं से मेल खाते हैं। गुरू ग्रंथ साहिब सिक्खों का पूज्य ग्रंथ है जिसमें रविदास की रचनाएँ संगृहीत है। इस ग्रंथ में कबीर को विशेष स्थान दिया है जिसमें 225 पद और 243 साखियाँ संगृहीत है।

कबीर के सिद्वान्तों को अपनाकर ही सच्चा मानव धर्म स्थापित किया जा सकता है। अनेकानेक धर्मों और जातियों के धागों से बुना यह देश कबीर की चदरिया है जिसे वे अपनी वंश परम्परा में सौंपते हुए मानो हर किसी को कह रहे है कि इसका एक भी धागा न टूटे और इसे जरा भी दाग नहीं लगे, और इसे मैला होने से भी बचाना है। कबीर आज अधिक प्रासंगिक है। शंभुनाथ ने ठीक ही कहा है कि धर्म की जिस नाव को संत कबीर अंधी आस्था के तट से विवेक के मुहाने पर ले आये थे उसे तुलसी ने पुनः अंधी आस्था के तट से बँधवा दिया। यदि तुलसी के मुख से वर्णव्यवस्था और साम्प्रदायिकता का विरोध प्रकट हो जाता तो हिन्दी क्षेत्र में लोकजागरण का स्तर दूसरा होता।

निष्कर्ष

ईश्वर अवतारों, पैगम्बरों और लुकमान की भाँति हिकमत वाले लोगों के द्वारा संदेश भेजकर इन्सान के लिए धर्म स्थापित करता रहा है। आज भी उनके विचार प्रासंगिक है। कबीर की दृष्टि में हर इन्सान के लिए सहज नैतिक जीवन की प्रेरणा है। अंहकार रहित, सांसारिक विषय वासनाओं का त्याग, बाह्य आडम्बरों से दूरी,कथनी–करनी की साम्यता के द्वारा महामानव के पद प्राप्त करने का संदेश है। जाति–पाँति, धनी–दरिद्र, ऊँच–नीच, स्पृश्य–अस्पृश्य के भेदभाव को मिथ्या और निस्सार मानकर जीवन जीने की बात कही है। धर्म की अधूरी समझ अधर्म और विनाश की ओर ले जाती है। विश्व में शांति और धर्म तब ही स्थापित हो सकता है जब कबीर के सिद्वान्तों को अपनाकर मानव धर्म का पालन किया जाये। रामचंद्र तिवारी ने सही लिखा है, 'जिसमें सत्ती की दृढ़ता, शूर का उत्साह, चन्दन की शीतलता,

हंस का विवेक, मृग की समर्पणशीलता होती है ऐसे ही निर्मल चित्त संत को हरि का दीदार प्राप्त हो सकता है।'[11] दुनियाँ का रास्ता विकट जरूर है बाधाएँ भी अनेक है परन्तु साधक को तो परमात्मा तक पहुँचना ही है। यह निश्चित है कि आने वाला युग कबीर का युग होगा क्योंकि जो कुछ उन्होनें कहा, दिखाया और किया, वह कठिन साधना से प्राप्त हुआ था और साधना निष्फल नहीं होती।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. वासुदेव सिंह, कबीर साखी सुधा, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1996, पृ. 10*
2. *डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, हिन्दी काव्य की निर्गुणधारा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ. 58–59*
3. *शिव कुमार मिश्र, भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998, पृ. 24*
4. *राजनाथ शर्मा, साहित्यिक निबन्ध, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1978, पृ.37*
5. *डॉ. वासुदेवसिंह, कबीर, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 234*
6. *डॉ. वासुदेवसिंह, कबीर, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ.239*
7. *पवित्र कुरआन, अध्याय 30, सूरह इख्लास–112*
8. *शिवकुमार मिश्र, भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998, पृ. 48*
9. *मैनेजर पांडेय, भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन,दिल्ली, 1993, पृ. 49–50*
10. *शिवकुमार मिश्र, भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998,पृ. 17*
11. *स. परमानन्द श्रीवास्तव, कबीर पुनर्पाठ, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 35*